लोकगीतों में वाद्यों की अहम् भूमिका

डॉ0 (श्रीमती) सुमन लता शर्मा
एसो0 प्रोफेसर, संगीत विभाग
आर0जी0 (पी0जी0) कॉलिज, मेरठ

लोकगीतों व लोकनृत्यों में प्राण डालने वाले वाद्य ही होते हैं। दो वस्तुओं के संघर्षण से जो आवाज निकली उसी से वाद्य संगीत की कल्पना साकार हुई। कंठ संगीत की तरह ही वाद्य संगीत का भी प्रादुर्भाव हुआ। वाद्यों की कल्पना कंठ संगीत के बाद की कल्पना है जो कंठ संगीत को अधिक प्रभावशाली बनाने के प्रयोजन से ही प्रादुर्भूत हुई है।

जिस समय फाग में ढोलक, कहारों के गानों में हुडुक, नौटंकी में नक्कारा, तमाशे में ढोलकी आदि बज उठते हैं तब लय के मदमाते झौंके मनुष्य के अंग–अंग को झुमा देते हैं। श्रोता घण्टों खोया–खोया वृक्ष–पत्तों की भाँति झूमता रहता है। लोकनृत्यों में तो यह स्थिति चरम सीमा पर पहुँच जाती है। पंजाब के भाँगड़ा का डफ व चिमटा, गुजरात के गरबा एवं डांडियों के डंडे, बंगाल तथा बिहार के भील तथा संघाली नृत्य के मादल आदि की ध्वनियों का वेग जब शनैः–शनैः बढ़ने लगता है तब नर्तकों के साथ–साथ दर्शकों के मन प्राण भी उछलने लगते हैं उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानो शंकर की ताल पर सारा ब्रह्माण्ड नाच रहा हो। यह मस्ती, यह मदहोशी, यह हर्षोन्माद की स्थिति और कहाँ परिलक्षित हो सकती है।

लोकसंगीत में वाद्यों को दो वर्गों में रखा जा सकता है –

1. स्वरोत्पत्ति के लिये बजाये जाने वाले वाद्य
2. लय व ताल के लिये बजाये जाने वाले वाद्य

स्वर के लिए बजाये जाने वाले तत् व सुषिर वाद्यों की अपेक्षा लय–ताल सूचक अवनद्ध व धन वाद्यों का प्रयोग अधिक होता है।

अवनद्ध वाद्यों में कुछ वाद्य ऐसे होते हैं जिनमें दोनों तरफ खाल मढ़ी होती है जैसे ढोल – डमरू।

दूसरे प्रकार में एक ओर खाल मढ़ी होती है तथा दूसरा मुख खुला रहता है जैसे – डफ व मंजीरा तथा तीसरे प्रकार में एक तरफ खाल मढ़ी रहती है दूसरी तरफ वैसे ही बंद रहता है जैसे नगाड़ा व मढ़की।

धन वाद्यों में घण्टी थाली, झाँझ, मंजीरा, चिमटा, टिकौर, चिम्पिया आदि अधिक देखने में आते हैं।

सुषिर वाद्यों में अलगोजा, सतारा, सुरनई, पुंगी, मुरली, तुरही, सिंगी, नागफनी आदि।

तत् वाद्यों में एकतारा, दोतारा, चौतारा, जन्तर, रबाब, रावण हत्था, जोगिया सारंगी, धानी सारंगी, गुजरातन सारंगी, सिंधी सारंगी, कामाँयचा, सुरिन्दा अलाबु सारंगी, तुनतुना, गोपी जन्त्र आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

इस प्रकार लोकगीत व लोक वाद्यों की प्राचीनता व हृदयग्राही प्रभाव स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है। आधुनिक समय में चित्रपट संगीत में भी लोकगीतों का प्रचलन है। विभिन्न धारावाहिकों में मांगलिक अवसरों पर इसका प्रभाव देखा जा सकता है तथा सामाजिक स्तर पर विभिन्न पर्वों, मांगलिक कार्यों व दैनन्दिन कार्यों के समय लोकसंगीत अपनी मधुरता से इन अवसरों की शोभा में चार चाँद लगा देता है तथा कार्य करने वालों की ऊर्जा में अभिवृद्धि करता है।

लोक गीतों के प्रकार – लोक संगीत के अन्तर्गत लोकगीत एवं लोकगाथा आते हैं लोकगीत आकार में छोटा होता है जबकि लोकगाथा का आकार विस्तृत होता है। राजस्थान का ढोला – मारू, उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिले की सोरठी तथा अंग्रेजी की 'द जेस्ट ऑफ रॉबिनहुड' नामक गाथा बड़ी लम्बी है। विषय की दृष्टि से लोकगीतों में विभिन्न संस्कारों, ऋतुओं एवं दैनिक अनुभूतियों के चित्र मिलते हैं जबकि लोकगाथाओं में प्रेमगाथाएँ तथा वीरगाथाएँ होती हैं।

इनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है –

1. संस्कारों की दृष्टि से
2. रस की दृष्टि से
3. ऋतुओं और व्रतों के अनुसार
4. जाति के आधार पर
5. श्रम के आधार पर

संस्कार गीत – संस्कार भारतीय जीवन की नींव है जन्म से लेकर मरण तक सभी संस्कारों के साथ मानव का अटूट संबंध रहता है। अतः इन अवसरों पर तरह–तरह के गीत गाये जाते हैं। जन्म और विवाह ये दो संस्कार अति महत्वपूर्ण हैं। इन अवसरों पर लोकमानस सुख और आनन्द से परिपूर्ण रहता है इस समय गाये जाने वाले गीत मंगलगीत कहलाते हैं। इन दोनों संस्कारों के अन्तर्गत अनेक संस्कारों का उल्लेख आता है जैसे जन्म संबंधी संस्कारों में – छठी, नामकरण, चूड़ाकरण, अन्नप्राशन, बरही, मुण्डन आदि तथा विवाह संस्कार

में भी कई प्रकार की विधियाँ होती हैं। आजकल जो सोलह संस्कारों की परम्परा प्रचलित है उनका वर्णन **'व्यासस्मृति'** में मिलता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी सोलह संस्कारों का ही उल्लेख किया है। **सूर सागर** में निम्न सोलह संस्कारों का उल्लेख है – **गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारंभ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ एवं सन्यास आदि।**

रसगीत – इनमें अलंकारों व रसों का सुन्दर समन्वय देखा जा सकता है। श्रृंगार के संयोग व वियोग दोनों पक्षों का सुन्दर चित्रण इनमें मिलता है। झूमर आदि गीतों में श्रृंगार रस का अच्छा वर्णन मिलता है –

कुसुम रंग चुनरी रंगा दे पियवा हो

चुनरी रंगा दे, अँगिया सिंया दे,

कोरे कोरे गोटवा लगा दे पियवा हो।

ऋतुओं एवं व्रतों के गीत – भारत ऋतुप्रधान देश है यहाँ हर ऋतु का अपना सौन्दर्य एवं महत्व है। इन ऋतुगीतों में प्रकृति सौन्दर्य के अतिरिक्त पारिवारिक प्रेम, सामाजिक जीवन एवं धार्मिक विश्वास आदि के लोकजीवन के चित्र भी मिलते हैं। बसन्त ऋतु में तो प्रकृति का रुप ही निखर उठता है। चौपालों में होली के रंगीले स्वर गूँजने लगते हैं –

फागुन मस्त महीना हो लाला

फागुन में बुढ़ऊ देवर लागे।

कजरी गीतों के नायक रहे हैं रसिक कृष्ण। उनकी बाल लीलाओं व गोपियों के साथ रास आदि के अनोखे चित्र इन गीतों में मिलते हैं –

ग्वालिन बने राधिका प्यारी

कृष्ण मनिहारी ए रामा।

व्रत और त्यौहार हमारी संस्कृति की आधारशिला है। इनमें हमारी परम्पराओं का इतिहास व संस्कृति की विकास गाथा है। ये हमें कुछ समय के लिये आपसी भेदभाव मिटाकर प्रेम के रंग में रंग देते हैं। इन व्रतों और त्यौहारों का वैज्ञानिक आधार भी है। व्रतों का करना स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा माना जाता है और त्यौहारों के रीति–रिवाज मानव कल्याण के प्रतीक हैं।

जातिपरक गीत – इस तरह के गीतों में अहीरों का कि बिरहा अपना एक स्थान रखता है। दुसाधों में जब कोई व्यक्ति प्रेतबाधा से पीड़ित होता है तो 'पचरा' गाकर देवी का आवाहन किया जाता है। गोंड जाति के गीतों को 'कहरवा' और तेलियों के गीतों को 'कोल्हू के गीत' कहते हैं। इस प्रकार ये विभिन्न जातियों में गाये जाने वाले गीत हैं।

श्रमगीत – काम करते समय थकावट मिटाने के गाये जाने वाले गीतों में जँतत्यार, रोपनी, सोहनी आदि हैं, जिन्हें श्रमगीत कहते हैं। पैदल यात्री गीत गाकर अपनी थकान मिटाता है तो पालकी ढोने वाले कहार गीत गाकर मार्ग तय करते हैं, खेतिहर मजदूर गीत गाकर अपनी थकान मिटाते हैं तो चरवाहों के गीतों से जंगल सरस हो उठता है।

इस प्रकार लोकगीतों और लोकगाथाओं में स्थानीयता का पुट विशेष रूप से पाया जाता है। जिस जनपद में जो गीत प्रचलित है, उनमें वहाँ के लोगों का रहन–सहन, रीति–रिवाज, आचार–व्यवहार सजीव रूप में चित्रित रहता है। लोकसंस्कृति इन गीतों में अपने पूर्ण वैभव के साथ प्रतिबिम्बित होती है। राजस्थान की लोकगाथाओं में वहाँ के बलिदानी वीरों की गाथा तथा क्षत्राणियों के मान–अभिमान का चित्रण है। बिहार की लोकगाथाओं में कुँवरसिंह का नाम आता है। मैथिली लोकगीतों में मिथिला की सामाजिक प्रथाएँ चित्रित हैं। इसी तरह अन्य सभी प्रान्तों के गीतों में वहाँ की परम्पराओं का स्पष्ट चित्र मिलता है।